भूमिका....

"मौन" आवाजों की आवाज है। "अरूप" रूपों का रूप है। "वीलम" प्रकाशों का प्रकाश है। "आस्वाद" स्वादों का स्वाद है। "अस्पर्श" स्पर्शों का स्पर्श है। "अपरा" वाकों की वाक् है। "आनन्द" कोषों का कोष है। "अगन्ध" गन्धों की गन्ध है। 'मौन', 'अरूप', 'वीलम', 'अस्पर्श', 'अगन्ध' शून्य नहीं है; अव्यक्त है। अव्यक्त व्यक्त का आधार है। अर्थ विचारों का विचार है।

बीज में है अव्यक्त वृक्ष। अव्यक्त वृक्ष से है विकास वृक्ष का। **"ओऽम् खं ब्रह्म"** है वह बीज जो यजुर्वेद की फुनगी पर लगा है। यजुर्वेद का वेदान्त है चालीसवां अध्याय जो बीज है उपनिषदों का।

बुद्धि धारा प्रस्फुटित होता है ज्ञान। बीज इस धारा का प्रस्फुटन है। इसमें अतिसूक्ष्म वृक्षतरंगों का विकास ऋषित्व है।

मन्त्रोपनिषद के मन्त्र उपमन्त्र बीज मनन रूप में है बीजवृक्ष।

डॉ. त्रिलोकीनाथ क्षत्रिय
पी. एच. डी. (वेद), एम. ए. (आठ विषय),
सत्यार्थ शास्त्री, बी. ई., एल. एल. बी.,
डी. एच. बी., पी. जी. डी. एच. ई.,
एम. आई. ई., आर. एम. पी. (१०७५२)
६ए/सड़क ४२/ से.५, भिलाई नगर, (म. प्र.)
& ०७८८–३५९७८९, ०७८८–८९–५२०५,

बीजवृक्ष

डॉ. त्रिलोकीनाथ क्षत्रिय

दर्शन का एक महत्वपूर्ण प्रश्न है-पहले मुर्गी हुई कि अण्डा? दार्शनिक दृष्टि से इसका स्पष्ट उत्तर है अण्डा-इस उत्तर का सरल तर्क है कि अण्डे में मुर्गी अव्यक्त रूप में पूरी की पूरी विद्यमान है या अण्डा बीज है मुर्गी वृक्ष का। अतः अण्डे का प्रथम होना आवश्यक है।

संस्कृत साहित्य वह बीज है जिससे कालांतर में कई कई ज्ञान शाखाओं का विकास हुआ। ज्ञान बीज का नाम संस्कृत में मन्त्र है। मन्त्र बीज चिन्तन से विकसित होकर ज्ञान वृक्ष बन जाता है। पूरे संस्कृत साहित्य में अनेक मन्त्रों का समावेश है। उदाहरण के रूप में मन्त्र उपनिषद के बीज यहां दिए जा रहे हैं। मन्त्र उपनिषद या ईशवास्योपनिषद प्रथम उपनिषद है। यह समस्त उपनिषदों का आधार होने के साथ ही साथ ज्ञान की कई विधाओं का भी आधार है।

शंकराचार्य इस उपनिषद के शान्ति पाठ में एक मन्त्र देते है। **"ओम पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पुर्णमुदच्यते।**
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते।।"

बृहदाररण्यक उपनिषद का यह मन्त्र। विश्व में उपलब्ध पूर्ण की प्रथम एवं अन्तिम पूर्ण परिभाषा है।

वह पूर्ण है। पूर्ण से पूर्ण उत्पन्न होता है। पूर्ण अशेष है। ओ३म् पूर्ण है।

उपरोक्त परिभाषा के अनुसार पूर्ण अशेष है। सारा गणित, विज्ञान शेषाधारित है अतः अपूर्ण है। विश्व में गणित को सर्वाधिक यथार्थ माना जाता है। एक तथा उसके विभाजन से शून्य तक जाती श्रेणियां १/२, १/४, १/८, १/१६ आदि गणित के एक को शून्य की दृष्टि से अनन्त सिद्ध करती हैं। जो यथार्थ दृष्टिकोण के साथ अन्याय है।

ईशावास्यम् आरम्भ है मन्त्रोपनिषद का "ईशावास्यामिद सर्वं" बीज है पूर्ण का। प्रथम पर गहनतम उन्मेष है। यह सब

ईश्वर से व्याप्त है। कण कण में ईश्वर है। ईश्वरीय नियम सत्ता है। इसका अर्थ कण कण ईश्वर नहीं होता है। ईशावास्यम् से आरम्भ होने के कारण इस उपनिषद का नाम ईशावास्य है।

ईशोपनिषद बीज के भी बीज ब्रह्म से आरम्भ होता है। इसका अधिकारी है मुमुक्षु अर्थात् उत्कृष्ट साधक इसका विषय है आत्मैक्य रूप या एकत्व, इसका सम्बन्ध है प्रतिपाद्य-प्रतिपादक रूप तथा इसका प्रयोजन है अज्ञान का नाश तथा ज्ञान की प्राप्ति प्रथम मन्त्र में पांच बीच सूत्र हैं।

१. सर्व ईशन है ब्रह्म-ब्रह्म शासन से परे कोई नहीं।

२. अस्थाई का आधार है स्थाई-जगत में अस्थाई का स्थाई हेतु समर्पण हो।

३. त्रिएषणा त्याग ही भोग है-पुत्त, वित्त, यश बन्धन त्रिएषणा हैं।

४. आसक्त हो मत।

५. भोग्य पदार्थ हैं किससे? किसी के नहीं।

मन्त्र का स्वर तथा भाव उपरोक्त अर्थ से कहीं सशक्त है। **ईशा वास्यमिदꣳसर्व यत्किञ्च जगत्यां जगत्। तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्य स्विद्धनम् ।।१।।**

द्वितीय मन्त्र के बीज सूत्र हैं।

६. निश्चय ही शोभन कर्मों को करता रह इस विश्व में।

७. शत वर्ष के जीवन स्वस्थ की आकांक्षा कर।

८. न लिप्त हो कर्म मुझमें न तू लिप्त हो कर्मों मे। अन्य नहीं है पथ उपरोक्त तीनों के सिवाय।

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतꣳ समाः।
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे।।२।।

तृतीय मन्त्र के बीज सूत्र हैं।

९. असूर्य तथा सूर्य नाम के दो लोक है। एक अन्धतम है दूसरा ज्योति दिव्य है। इनमें कर्मफलों का फलन है।

१०.दो तरह के मनुष्य हैं-१.आत्महना, २. आत्मसंरक्षा। आत्मा में कुछ, वाणी-आचरण में कुछ यह आत्मघात है। आत्मा, आचरण, वाणी एक होना आत्म-संरक्षा है।

असूर्य्या नाम से लोकाऽअन्धेन तमसावृताः।
ताँस्ते प्रत्यापिगच्छन्ति ये के चात्महनो जना।।३।।

प्रथम तीन मन्त्रों को कर्तव्य पंचक मन्त्र भी कहते हैं। ब्रह्म साधक के लिए १, २, बीज सूत्र पहला कर्तव्य; ३ रा बीज सूत्र दूसरा कर्तव्य; ४, ५ बीज सूत्र तीसरा कर्तव्य; ६, ७, ८ बीज सूत्र चौथा कर्तव्य तथा ९,१० बीज सूत्र पांचवा कर्तव्य दर्शाते हैं।

प्रथम पांच बीज सूत्र प्रशासन का प्रारूप भी दर्शाते हैं -

अ. प्रशासन सर्वव्यापक हो, सम हो।

ब. प्रशासन स्थाई आधारित हो व्यक्ति आधारित नहीं।

स. प्रशासन एषणा तत्त्वों से मुक्त हो तथा इसमें स्व नियोजन से
पर या जन नियोजन को अधिक महत्व हो।

द. प्रशासक पद आसक्ति रहित हो।

ई. प्रशासक भोग्य की प्रवहणशीलता को समझते हुए शासन करें।

मन्त्रोपनिषद के अगले दो मन्त्र बीज सूत्रों से भरे हैं। इनमें उच्च कोटि का तत्व ज्ञान हैं जो

१. अथर्व अद्वितीय है अथर्व-स्थिति विचलन रहित।

२. मन-वेग गति से भी अप्राप्त है अथर्व।

३. सर्व गतियों के लक्ष्य पर पूर्व स्थित है। सर्व केन्द्रीय सर्व परिधीय है।

४. देवता परे हैं। इन्द्रियमय आत्मा से विलक्षण है। उस

५. स्थिर ब्रह्म की स्थिरता में जीव कर्म धारण करता है।

मन्त्र इस प्रकार है-

अनेजदेकं मनसो जवीयो नैनद्देवा आप्नुवन्पूर्वमर्षत। तद्धावतो ऽ न्यानत्येति तिष्ठत्तस्मिन्नपो मातरिश्वा दधाति।।४।।

अगला मन्त्र इस मन्त्रा का पूरक है जो-

६. अगतित है गतियों का जन्मदाता।

७. दूरतम है सभी के निकटतम है।

८. सर्वअन्तसीय है सर्वबाह्यीय है।

तदेजति तन्नैजति तद् दूरे तद्वन्तिके।
तदन्तरस्य सर्वस्य तदु सर्वस्यास्य बाह्यतः।।५।।

ये आठ सूत्र ब्रह्म सूत्र या ओम् सूत्र हैं। इन सूत्रों में **पाईथेगोरस** का अस्पर्श्य अदृश्य मूल तत्व, **पार्मेनाइडिस** का "सब कुछ एक है" **जीनो** का "गति का कोई अस्तित्व नहीं" **इलिया** का "सत एक रस नित्य है" बहुत्व और परिवर्तन आभास छाया मात्रा है, **प्लेटो** का "सर्वश्रेष्ठ भद्र प्रत्यय", **अरस्तू** का "अगतित गतिदाता", **एक्विनास** का "अनित्य और अस्थिर की नींव नित्य तथा स्थिर सत्ता पर होती है," **डेकार्ट** की-"मैं सोचता हूं मैं हूं", **स्पिनोजा** का "जगत परमात्मा का अनिवार्य प्रगटन है", **लाइब्नित्ज** का "चिद्बिन्दुवाद" **बर्कले** का "चैतन्यवाद सारी सत्ता चेतन आत्मा व बेबांधों की है", **कांट** का "अज्ञेय", **फिख्ते** का "प्रत्येक वस्तु वही है जो वह है" और **हेगल** का "जो वास्तविक है वह विवेकपूर्ण है" सिद्धान्त समाविष्ट हैं।

भारतीय चिन्तकों ने तो इसे आधार सूत्र माना ही है ब्रह्म दृष्टि ही सत्य दृष्टि है। देखने का अर्थ भारतीय अध्यात्म में विद्या, धर्म और योग अभ्यास के पश्चात् ध्यान दृष्टि से देखना ही है। अगले दो मन्त्रों में उच्च कोटि के देखने तथा उसके परिणाम के बीज हैं जो मानव -

१९. सम्पूर्ण चराचर जगत को आत्मा में ही देखता है।

२०. सम्पूर्ण चराचर जगत में, आत्मा को देखता है। अर्थात

आत्मवत द्रष्टा है। वह

२१. अनिन्दित या संशयरहित या प्रशंसनीय या ज्ञानी है।

आत्मवत दृष्टि समस्त धर्मों का बीज है। सारे धर्मों से "आत्मवत दृष्टि" निकाल दी जाए तो वे धर्म निरस्त हो जाएंगे। उपरोक्त आत्मवत दृष्टि से परमात्मावत दृष्टि का ही भाव है। अगला मन्त्र इसी भावना का विस्तार है। आत्मवत दृष्टि का १६, २०, २१ सूत्र मन्त्र यह है–

यस्तु सर्वाणि भूतान्यात्मन्नेवानुपश्यति।
सर्वभूतेषु चात्मानं ततो न वि चिकित्सति।।६।।

२२. अ) परमात्मा, ब) ज्ञान, स) विज्ञान, द) धर्म में निष्णान्त परिष्कृत हो व्यक्ति।

२३. समस्त प्राणी मात्र आत्म-तुल्य सुख-दुःख व्यवहार वाले होने से अनूभूत हों।

२४. गहन साधना से प्राप्त होती है एकत्व भावना। उपरोक्त को–

२५. कहां है मोह? कहां है शोक?

यस्मिन्त्सर्वाणि भूतान्यात्मैवाभूद्विजानतः।
तत्र को मोहः कः शोकऽएकत्वमनुपश्यतः।।७।।

धर्म का महा सूत्र है यह मन्त्र। इसमें **नीरज** का...

"क्या करेगा प्यार वह ईमान को,
क्या करेगा प्यार वह भगवान को
होकर के एक इन्सान जो
कर न सका प्यार एक इंसान को।"

नानक का *'सब मयि रमि रहियो प्रभु एको'।*

कुरान का *"अफजलुल इमानि इत तो हिब्बो लिनन से मा तो हिब्बो व तक्र हो लहुम"।*

दूसरे लिए वह आचरण न करना है जिसे अपने लिए तकलीफ देह पाते हैं, **बौद्ध धर्म** का *"सब्बे सम जीवितं पिब्बं अत्थानं उपम कृत्वा न हन्ये न घातये,"* **जैन धर्म** का

"आयातुले पयासु" **महाभारत** का *"श्रूयतां धर्मस्य सारं श्रुत्वा चैवावधार्यताम्। आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्। यदिच्छत च आत्मानि तद् परस्यापि चिन्तयेत्।"* **गीता** का *"यस्मान्नोद्विजते लोको, लोकान्नोद्विजते च यः।"* भाव अधिक सशक्त सुव्यस्थित रूप में अभिव्यक्त है। इन चार सूत्रों में सर्वधर्म सार दिया गया है।

अगले मन्त्र में परमात्मा विषयक उपासक की दो तरह की समस्त भावनाओं का सार दिया गया है जो आत्मवत साध ाक के लिए प्राप्तव्य है वह महापुरुष। उन

२६. अ) कायारहित, ब) अक्षत-छिद्र क्षतरहित, स) स्नायु रहित स्थूल पाच्य भौतिक शरीर रहित, द) शुभाशुभ कर्म सम्पर्क शून्य, इ) अपापकृत, फ) अपापहत एवं

२७. अ) सर्वगत, ब) शुद्ध, स) परम तेजामय, द) स्वयम्भू, ल) अनादिकाल से प्राणियों के कर्तव्यों तथा पदार्थों का यथार्थ भाव से रचनाकार तथा व्यवस्थापक को प्राप्त हो जाता है।

परमात्मा विश्व में समाया है, विश्व नहीं है इसका प्रतिपादन २६ वें सूत्र में तथा परमात्मा स्वयं में पूर्ण है इसका प्रतिपादन २७ वें सूत्र में है। परमात्मा के ये दो ही रूप मानव जाति में प्रचलित हैं।

स पर्य्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविरꣳशुद्धमपापविद्धम्। कविर्मनीषी परिभूः स्वयंभूर्याथातथ्यतोऽर्थान् व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः।।८।।

वाद, प्रतिवाद, संवाद- समन्वय का सिद्धान्त है जो पाश्चात्य चिन्तन विकास का आधार रहा है। विज्ञान तथा धर्म का विवाद भी वह समस्या है जो चिन्तक सुलझा नहीं सके हैं। अगले छः मन्त्रों में उपरोक्त सिद्धान्त तथा समस्या और उसका **हेगल** तथा **मार्क्स** द्वारा प्रतिपादित समाधान पूर्व में ही पूर्ण दिया गया है।

२८. अविद्या उपासक अन्धकार को प्राप्त होते हैं।

२९. विद्या उपासक उससे भी सघन अन्धकार को प्राप्त होते

हैं।

३०. अविद्या का अन्य ही फल है।

३१. विद्या का अन्य ही फल है।

३२. विद्या अविद्या एक साथ जानो।

३३. अविद्या मृत्यु पार करने का साधन है, विद्या अमरत्व प्राप्ति का साधन है।

३४. असम्भूति उपासक अन्धकार को प्राप्त होता है।

३५. सम्भूति उपासक उससे भी घने अन्धकार को प्राप्त होता है। **३६.** असम्भूति का अन्य ही फल है।

३७. सम्भूति का अन्य ही फल है।

३८. असम्भूति और सम्भूति को एक साथ जानो।

३९. असम्भूति मृत्यु पार करने का साधन है, सम्भूति अमरत्व प्राप्ति का साधन है।

ये सूत्र महत्वपूर्ण समन्वय सूत्र हैं। अविद्या, विद्या, अम्सभूति, सम्भूति के अर्थ कई कई दिशा बोध देते हैं। मन्त्र इस प्रकार है।

अन्धन्तमः प्र विशन्ति ये विद्यामुपासते।
ततो भूयऽइव ते तमो यऽउ विद्यायां रताः ।।९।।

अन्य देवाहुर्विद्याया ऽअन्यदाहुरविद्यायाः।
इति शुश्रुम धीराणां ये नस्तद्विचचक्षिरे।।१०।।
विद्या चाविद्यां च यस्तद्वेदोभय ँ सह।
अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययामृतमश्नुते।।११।।
अन्धन्तमः प्रविशन्ति ये ऽअसम्भूतिमुपासते।
ततो भूयऽइव ते तमो यऽउ सम्भूत्यां रताः।।१२।।
अन्यदेवाहुः सम्भवादन्यदाहुरसम्भवात्।
इति शुश्रुम धीराणां ये नस्तद्विचचक्षरे।।१३।।
सम्भूतिं च विनाश च यस्तद्वेदोभय ँ सह।
विनाशेन मृत्युं तीर्त्वा सम्भूत्यामृतमश्नुते।।१४।।

विद्या = {१} ब्रह्म प्राप्ति का साधन ज्ञान, {२} शब्द, अर्थ इनके सम्बन्ध मात्र को जानना, {३} वाद, {४} व्यक्ति निष्ठ ज्ञान।
अविद्या त्र {१} कर्मों का अनुष्ठान, {२} अनित्य में नित्य, अशुद्ध में शुद्ध, दुःख में सुख और अनात्मा शरीरादि में आत्मा मानना, {३} प्रतिवाद, {४} समाज निष्ठ ज्ञान चारों अर्थ सम्बन्धो का विस्तार सहजतः हो सकता है।
असम्भूति = {१} अव्यक्त, {२} विनाशशील देव, मनुष्य, पितरादि, {३} अनादि अनुत्पन्न सत्व, रज और तम गुणमय प्रकृति रूप जड़ वस्तु, {४} भौतिकता, {५} शुनः = अतिमानसिक स्तर।
सम्भूति = {१} कार्य ब्रह्म, {२} अविनाशी ब्रह्म, {३} संयोग जन्य कार्य जगत, {४} आध्यात्मिकता, {५} सीर = मानसिक स्तर।

अन्धकार एवं घनघोर अन्धकार से बचने का एक मात्र पथ उच्चकोटि का समन्वय से उपरोक्त विद्या अविद्या इन्साइक्लोपीडिया ब्रिटानिका के विज्ञान और कला भी लिए जा सकते हैं। विज्ञान या Science = Consists in knowing तथा कला या Art = Consists in doing. सम्भूति असम्भूति का एक अर्थ सगुण, निर्गुण भी लिया जा सकता है।

मन्त्रोपनिषद अन्धकार, घने अन्धकार से ही नहीं हिरण्य पदार्थों से भी सावधान करता है।

४०. सत्य का मुख स्वर्णिम आवरण से ढंका है।
४१. सत्य धर्मा आत्मा हो गया हूं।
४२. आवरण चीर दो।

सूर्यों में सूर्य है ब्रह्म।

सत्यम् = स +ति +यम। स = जीव , ति = नाशवान ब्रह्माण्ड, यम = नियन्ता ब्रह्म कहां है? "तत्सत्ये" वह सत्य में अधिष्ठित है। सत्यमय ही सत्य पर आए आवरण चीर सकता है।

हिरण्यमेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम्।
तत्वं पूषन्नपावृणु सत्य धर्माय दृष्टये।।१५।।

अगला मन्त्रा इस मन्त्र का पूरक मन्त्र है।

पुषन्नेकर्षे यम सूर्य प्राजापत्य व्यूह रश्मीन्समूह।
तेजो यन्ते रूपं कल्याणतमं तन्ते पश्यामि,
यो ऽसावादित्ये पुरुषः सो ऽहमस्मि।।१६।।

४३. परमात्मा सर्वपोषक, अद्वितीय गतित, नियन्ता, ज्योर्तिमय, प्रजापति है।

४४. ऐसा परमात्मा ताप व्यूह मुझ सत्य द्रष्टा का दूर करे तथा सत्य स्वरूप सुखप्रद तेज प्राप्त कराए।

४५. ब्रह्म का अत्यन्त मंगलमय रूप मैं धारण कर रहा हूं इसलिए जो यह अतिशय कल्याण रूप में है वह ही मैं हूं।

सत्य धर्मा आत्मा ब्रह्म के सर्वपोषक तत्व, समत्व, नियन्तत्व, ज्योतित्व, प्रजापत्य गुणों के अवधारण से ब्रह्मत्व की साक्षात अनुभूति करता है। यह विश्व का सर्वोच्च आध्यात्म तथा व्यवहार का समन्वय है। परम शुभ से तदाकारता का पथ स्वयं को परमशुभत्व से भर लेना ही है।

विश्व में सर्वाधिक चिन्तन मृत्यु पर उपलब्ध है। **नीरज** इसे "न जन्म कुछ, न मृत्यु कुछ, बस इतनी सी बात है, किसी की आंख खुल गई किसी को नींद आ गई" द्वारा अभिव्यक्त करता है। **मीर** इसे "दम लेकर आगे बढ़ने की आरागमाह" कहता है। **विज्ञान** इसे "मस्तिष्क का जड़-निष्क्रिय" होना मानता है। **महाभारत** इसे महान आश्चर्य कहता है। **विद्यानन्द विदेह** मृत्यु का अर्थ "आ-प्रादुर्भवन्" अथवा "अदृष्टता" मानते हैं। इसमें आत्म दृष्टि विनष्ट हो जाती है।

छांदोग्योपनिषद के ऋषि **घोर आंगिरस** कृष्ण को उपदेश देते कहते हैं कि मृत्यु पूर्व मानव तीन वाक्यों का उच्चारण करे।

{१} त्वं अक्षितमासि।
{२} त्वं अच्युतमसि।
{३} त्वं प्राणसंशितमसि।

आप अक्षित हैं, अविनश्वर हैं, सर्वजीवनप्रद सूक्ष्मतम हैं। उपरोक्त मृत्यु चिन्तन तथा अन्य मृत्यु चिन्तनों का बीज है मन्त्रोपनिषद का अगला मन्त्र।

४६. प्राण तथा इन्द्रियों का समाष्टि तत्व में है विलय।

४७. कारणातीत है कारण आधार।

४८. शरीर है मात्र भस्म पर्यन्त।

४९. कृत कर्म विचार।

५०. शक्ति अर्चन कर।

५१. ब्रह्म - ओ३म् स्मर।

मन्त्र इस प्रकार है-

वायुरनिलममृतमथेदं भस्मान्तं शरीरम् । ओ३म् क्रतो स्मर क्लिबे स्मर कृत ्ँस्मर।।१७।।

सदियों तक मानव जाति का अध्यात्मिक तथा भौतिक या वैज्ञानिक मृत्यु चिन्तन उपरोक्त मन्त्र से अधिक नहीं ठहरता है। मृत्यु सत्य से ही सम्बन्धित है कर्म फल। कर्म एवं फल अपने आप में रहस्य है। इस रहस्य का अगले मन्त्र में सुविमोचन है।

५२. सर्वनेतः परमात्मन्, सर्वानन्द प्रापक, सर्वजगत प्रकाश, समस्त विद्यान्वित जगदीश्वर हैं आप।

५३. आपमय (ब्रह्ममय) होकर विद्वान धार्मिकजन सर्वोत्तम धन मोक्ष के लिए सन्मार्ग से गमन करते समस्त प्रशस्त कर्म विज्ञान या प्रज्ञा या दिव्य क्रान्ति को प्राप्त होते हैं।

५४. उपरोक्त प्रेरणा हमें भी मिले। हम कुटिल दुःख रूपी फल से विमुक्त हों।

५५. प्रभु आपको बारम्बार नमस्कार है।

विपथ, पथ, सुपथ मानव चुन सकता है। प्रशस्त कर्म विज्ञान या प्रज्ञा या दिव्यक्रान्ति मात्र सुपथ द्वारा प्राप्त होते हैं। प्रभु सर्व अग्रणी, समस्त आनन्दों का दायक, जगज्ज्योति, और विद्या का साक्षात् रूप है । प्रभु गुणों को बारम्बार के समर्पण द्वारा ही सन्मार्ग प्रेरणा होती है तथा कुटिलता से विमुक्ति होती है। इसी से उत्तम समृद्धियां प्राप्त होती हैं।

अग्ने नय सुपथा रायेऽअस्मान्विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्। युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नमऽउक्तिं विधेम।।१८।।

इस प्रकार ये पचपन सूत्र जीवन जीने के बीज सूत्र हैं। इन्हें अपने जीवन में विस्तार देना मानव का कर्तव्य है तथा इस कर्तव्य के पालन से मानव को मोक्ष की सिद्धि होगी। उसका यह जीवन तो सुखी होगा ही।

उपरोक्त अट्ठारह मन्त्र तथा कतिपय परिवर्तन के साथ यजुर्वेद का चालीसवां अध्याय जो भाव रूप में एक ही है समस्त उपनिषदों के भी बीज हैं। तथा इनमें गीता का आधार भूत ज्ञान भी है। इसका अनुपालन हर जीवन को सुखी कर देगा।

भारतीय चिन्तन धारा वेदों से प्रभावित है। दर्शन, धर्म, साहित्य, कला सबमें वेदों का प्रभाव है। आर्यों का जीवन बौद्धिकता एवं अन्तर्दृष्टि पर आधारित था। इन्हीं के आधार पर उनकी नैतिक अवधारणाओं का ऋत के रूप में विकास हुआ था। नैतिक ऋत का वरुण नियन्त्रित स्वरूप संहिताओं में अनुभूतिजन्य प्रतीकों के रूप में कई स्थल दिया गया है। रहस्यात्मक अनुभूति जब संसार के लिए अभिव्यक्त होती है तो उसमें प्रतीकों का समावेश हो जाता है। वैदिक संस्कृति मानव स्वभाव के आधारभूत ढांचे को सत्यमय करती रही। इस संस्कृति के अनुभूतिजन्य प्रतीक कालांतर में विश्लेषण के द्वारा विकसित हुए। उपनिषद काल विश्लेषणकाल कहा जा सकता है।

वैदिक काल अवधारणा एवं जीवन का स्वस्थ स्वरूप यजुर्वेद के चालीसवें (अन्तिम) अध्याय में दिया गया है। जिसमें ज्ञान, कर्म, ब्रह्म का विवरण देने के पश्चात इनमें समन्वय किया गया है तथा अन्त में "ओऽम् खं ब्रह्म" से इस अध्याय का समापन है। इस अध्याय के पांच भाग किए जा सकते हैं।

प्रथम भाग- **"कर्तव्य पंचक"** (प्रथम तीन मन्त्र)
(क) ईश्वरव्याप्ति भावना, (ख) त्याग पूर्वक भोग, (ग) दूसरों के 'स्व' का आदर, (घ) कर्तव्य भावना से सतत कर्म, (ङ) अन्तरात्मा का अहनन।

द्वितीय भाग- **"ब्रह्म विद्या"** (मन्त्र-४ से ८)
(क) इसमें ब्रह्म को अचल होने पर भी समस्त कम्पनों या गतियों का उद्गमदाता, इन्द्रिय मन द्वारा अगम्य, अन्तस एवं बाह्य व्यापक, निकटतम से दूरतम तक व्याप्त दर्शाया गया है।

(ख) इस भाग में आत्मा के समान सबको जानने के माध्यम से एकत्व प्राप्ति तथा, (ग) ईश्वर के जगत के सन्दर्भ में गुण बताए गए हैं।

तृतीय भाग- **"समन्वय"** (मन्त्र-९ से १४) इसमें (क) विद्या अविद्या का समन्वय, (ख) सम्भूति-असम्भूति ज्ञान व्यवहार का समन्वय है।

चतुर्थ भाग- **"जीव-तत्व"** (मन्त्र-१५ से १६) (क) शरीर का भस्म होने तक साथ होना तथा (ख) आत्मा का अमर होना निरुपित है।

पंचम भाग- **"ओऽम् खं ब्रह्म"** (मन्त्र-१७) (क) आकाशवत व्यापी एवं (ख) सर्व के समस्त गुणों से भी अधिक ब्रह्म को कहा गया है।

यजुर्वेद का चालीसवां अध्याय थोड़े से भेद के साथ ईशोपनिषद या ईशावास्योपनिषद या वाजसनेयोपनिषद नाम से प्रसिद्ध मन्त्रोपनिषद है। मन्त्र भाग होने के कारण इसे प्रथम उपनिषद माना गया है। इसकी विशेष व्याख्या अन्य उपनिषद है।

अनेजदेकं मनसो जवीयो नैनद्देवा आप्नुवन पूर्वमर्षत्। का विस्तार केनोपनिषद है जिसकी मूलभूत विचारधारा है कि उसे ब्रह्म तक न तो चक्षु, न इन्द्रिय, न प्राण, न वाक्, न मन ही पहुंचते हैं।

अन्यदेवाहुः सम्भवादन्यदाहुरसम्भवात् तथा **अन्यदेवाहुर्विद्यायाऽअन्यदाहुरविद्यायाः** का वर्णनविस्तार कठोपनिषद में श्रेय-प्रेय विवेचन तथा अविवेकी विवेकी के अन्तर के रूप में है। यजुर्वेद के अन्तिम बीज मन्त्र **"ओऽम् खं ब्रह्म"** का वर्णन **"ओऽमित्येतत्", "एतदालम्बनम्", "एतद्वै सत्यकाम", "ओऽमित्यात्मानं युञ्जीत", "ओऽमिति ब्रह्म"** एवं **"ओंकारएवेदं सर्वम्"** आदि द्वारा अनेक उपनिषदों में फैला है। प्रश्नोपनिषद में भी ऋग्वेद, यजुर्वेद एवं सामवेद तीनों वेदों को ओऽम् की तीन मात्राओं में पिरोते

हुए क्रमशः धरालोक, अन्तरिक्षलोकएवं ब्रह्मलोक की प्राप्ति का साधन ओऽम् बताया गया है।

इसी प्रकार यजुर्वेद ४०/१६, ५/३६, १७/४३ तथा ऋग्वेद १/१८६/१ में आया **अग्ने नय सुपथा राये अस्मान्विश्वानि देव वयुनानि विद्वान। युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठान्ते नम उक्तिं विधेम।।** मन्त्र इशावास्योपनिषद का १८ वां मन्त्र भी है। यह मन्त्र वैदिक नैतिक आचार दर्शाता है तथा उपनिषद शब्द का अर्थ भी प्रकट करता है। इस मन्त्र में कर्म के ज्ञाता परमात्मा से कुपथ से हटाकर सुपथ पे चलाकर श्रेष्ठ परम पद पाने की प्रार्थना की गई है। श्रेष्ठ परम पद पाना ही ब्रह्म के समीप बैठना है।

इस प्रकार यजुर्वेद का अन्तिम अध्याय उपनिषद सार है। इस अध्याय में ईश्वर गुणों का वर्णन, अधर्म त्याग का उपदेश, सब काल में सत स्वरूप का वर्णन, सर्वत्र आत्मा जानके अहिंसा धर्म की रक्षा, मोह शोकादि का त्याग, ईश्वर का जन्मादि दोष रहित होना, वेद विद्या का उपदेश, कार्यकारण रूप जड़ जगत की उपासना का निषेध, चेतन की उपासना विधि, जड़-चेतन के स्वरूप जानने की आवश्यकता, शरीर के स्वभाव का वर्णन, समाधि से परमेश्वर को अपने आत्मा में धारण कर शरीर त्यागना, शरीर दाह पश्चात अन्य क्रिया के अनुष्ठान का निषेध, अधर्म के त्याग और धर्म की वृद्धि हेतु ईश्वर की प्रार्थना, ईश्वर के स्वरूप का वर्णन और सब नामों से **"ओऽम्"** नाम की उत्तमता का प्रतिपादन किया गया है। ये समस्त वैदिक नैतिक आचार हैं जो उपनिषदों के बीजाधार हैं।

हंसः शुचिषद्वसुरन्तरिक्षसद्धोता वेदिषदतिथिर्दुरोणसत्। नृषद्वरसदृतसद्व्योमसदब्जा गोजा ऋतजा अद्रिजा ऋतम्।।

यजुर्वेद १०/२४, १२/१४ तथा ऋग्वेद ४/४०/५ में आया यह आचार परक मन्त्र कठोपनिषद २/२/२ में पुनरावृत्ति हुआ है। इस मन्त्र के अनुसार जो ईश्वर के गुणों के अनुसार

आचरण करते हैं वे ही परमेश्वर के सामीप्य का आनन्द प्राप्त करते हैं। कठोपनिषद के २/२/३ से २/२/१३ तक के श्लोकों में प्राण अपान से हृदयस्थ ब्रह्म, देह देह गमन कर्ता देह भिन्न ब्रह्म, कर्मानुसार योनियों, भोगों का निर्माणकर्ता जागृत ब्रह्म, अग्नि वायु सूर्यवत सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में व्यापक धारणीय ब्रह्म, सर्व भूतान्तरात्मा ब्रह्म, नित्यो नित्यानां चेतनश्चेतनानाम् ब्रह्म, अव्यक्तमुत्तमम् ब्रह्म आदि रूपों में परमेश्वर का वह स्वरूप विकसित है जो जीव के लिए धारणीय है तथा जिसे धारण करके जीव अपना उत्थान कर सकता है।

उपनिषदों की उपासना का स्वरूप जीव का ब्रह्ममय होना है। गम्भीरानन्द उपनिषद चिन्तन को "उपासना" के अन्तर्गत लेते हुए उपासना को उपनिषद, दर्शन एवं वेदादि कहते हैं। वे उपनिषदों के ब्रह्म और अब्रह्म दोनों सन्दर्भों में उपासना होने की बात कहते हैं। इनके अनुसार उपनिषदों में बौद्धिक पकड़ के साथ ही साथ आध्यात्मिक विशिष्टता भी है। इसी कारण उपासना की एक निश्चित दिशा है। यह दिशा ब्रह्म है।

उपरोक्त उपासना उपनिषद सार है। यजुर्वेद ११/४ मन्त्र श्वेताशतरोपनिषद २/४ में भी इसी उपासना के स्वरूप को दर्शाता है। जिन पर ब्रह्म परमात्मा में श्रेष्ठ बुद्धिवाले ब्राह्मणदि अधिकारी मनुष्य अपने मन को लगाते हैं तथा अपनी सब प्रकार की बुद्धियों को भी नियुक्त करते हैं। जिन्होंने अग्निहोत्रादि समस्त शुभकर्मों का विधान किया है, जो समस्त जगत के विचारों को जानने वाले और अद्बितीय है, उन सबसे महान, सर्वव्यापी, सर्वज्ञ और सबके उत्पादक परमेश्वर की अवश्य हमें महती स्तुति करनी चाहिए। इसका भावार्थ इस प्रकार है – जो नियम से आहार-विहार करनेवाले हैं जितेन्द्रिय पुरुष हैं वे एकान्त देश में परमात्मा के साथ अपने आत्मा को युक्त करते हैं, वे तत्वज्ञान को प्राप्त कर नित्य ही आनन्द भोगते हैं। इस उपनिषद के द्वितीय अध्याय के पांचों मन्त्र वेद से लिए

गए हैं। ये मन्त्र वैदिकाचार, योगसाधना तथा ब्रह्म युजन का स्वरूप दर्शाते हैं।

इस प्रकार वैदिक आचार में धारणीय परमात्मा ही वह दृढ़ आधार हैजिस पर उपनिषदों का विकास हुआ है। इस विकास में अध्यात्मालोचना तथा उच्च आध्यात्मिक अनुभूतियां इनमें अभिव्यक्त हुईं हैं। जहां ब्रह्म साक्षात्कार के लिए वैदिक ऋषियों नें आचार, धर्मानुष्ठान, तप, यज्ञानुष्ठान, योग, विशिष्ट साधना एवं अनुभूति सभी पर ध्यान दिया था वहां उपनिषदों में योग, विशिष्ट साधना एवं अनुभूति पर अपेक्षाकृत अधिक ध्यान दिया गया है। ईशावास्यापनिषद या यजुर्वेद के चालीसवें अध्याय के बीजाधार को व्याख्या से उपनिषदों का अधिक अनुभूतिपरक होना स्पष्ट है।

उपनिषद में वैदिक धर्म के अनुभव भाग का विवरण है। वैदिक धर्म के अनुभव का उनमें जो विकास हुआ है उसमें एक अन्तर्दृष्टि, स्फूर्ति,गति तथा आनन्द है। उपनिषदों में तर्क के परे के अनुभव प्राप्त होते हैं जो सहज सरल पर गहन तर्कों पर आधारित है। यह अनुभव तर्क का विरोधी नहीं है परन्तु उससे उच्च है।

उपनिषद स्वयं कहते हैं **"तद्वेदोगुह्योपनिषत्सु गूढं तद् ब्रह्मा वेदते ब्रह्मयोनिम्।** अर्थात परमात्मा वेदों के रहस्यभूत उपनिषदों में गूढ़ छिपा हुआ है। वेदों के प्रकट स्थान में उस परमात्मा को ब्रह्मवेत्ता जानता है।